डॉ० सुनीता कुमारी
सहायक प्रोफेसर
हिन्दी विभाग
सोगरा कॉलेज, बिहारशरीफ, नालंदा।

स्नातक खण्ड - III
पत्र - (5)

भाषा की परिभाषा, राज्यभाषा, राष्ट्रभाषा, राजभाषा और इतिहास

एक भाषा कई लिपियों में लिखी जा सकती है, और दो या अधिक भाषाओं की एक ही लिपि हो सकती है। "भाषा संस्कृति का वाहन है और उसका अंग भी।" — रामविलास शर्मा।

भाषा वह साधन है, जिनके माध्यम से हम सोचते हैं और अपने विचारों, भावनाओं एवं अनुभूतियों को भाषा के माध्यम से ही व्यक्त करते हैं।

भाषा मुख से उच्चारित होनेवाले शब्दों और वाक्यों आदि का वह समूह है जिनके द्वारा मन की बात बतलाई जाती है।

भाषा

इस समय सारे संसार में प्रायः हजारों प्रकार की भाषाएँ बोली जाती हैं जो साधारणतः अपने भाषियों को छोड़ और लोगों की समझ में नहीं आतीं। अपने समाज या देश की भाषा तो लोग बचपन से ही अभ्यास होने के कारण अच्छी तरह से जानते हैं, पर दूसरे देशों या समाजों की भाषा बिना अच्छी तरह से पढ़े हम नहीं समझ सकते हैं।

भाषावितान के ज्ञाताओं ने भाषाओं के आर्य, सेमेटिक, हेमेटिक आदि कई वर्ग स्थापित करके उनमें से प्रत्येक की अलग-अलग

Scanned with CamScanner

शाखाएँ स्थापित की हैं और उन शाखाओं के भी अनेक वर्ग उपवर्ग बनाकर उनमें बड़ी-बड़ी भाषाओं और उनके प्रांतीय भेदों, उपभाषाओं अथवा बोलियों को रखा है। जैसे हमारी हिन्दी भाषा भाषाविज्ञान की दृष्टि से भाषाओं के आर्य वर्ग की भारतीय आर्य शाखा की एक भाषा है; और ब्रजभाषा, अवधी, बुंदेलखंडी आदि इसकी उपभाषा या बोलियाँ हैं। पास पास बोली जानेवाली अनेक उपभाषाओं या बोलियों में बहुत कुछ साम्य होता है; और उसी साम्य के आधार पर उनके वर्ग या कुल स्थापित किये जाते हैं। यही बात बड़ी-बड़ी भाषाओं में भी है जिनका पारस्परिक साम्य उतना अधिक तो नहीं, पर फिर भी बहुत कुछ होता है।

संसार की सभी बातों की भाँति भाषा का भी आदिम अवस्था के अव्यक्त नाद से अबतक बराबर विकास होता आया है; और इसी विकास के कारण भाषाओं में सदा परिवर्तन होता रहता है भारतीय आर्यों की वैदिक भाषा से संस्कृत और प्राकृतों से अपभ्रंशों से आधुनिक भारतीय भाषाओं का विकास हुआ है। सामान्यतः भाषा को वैचारिक आदान-प्रदान का माध्यम कहा जा सकता है।

भाषा आभ्यंतर अभिव्यक्ति का सर्वाधिक विश्वसनीय माध्यम है। यही नहीं वह हमारे आभ्यंतर के निर्माण, विकास, हमारी अस्मिता, सामाजिक-सांस्कृतिक पहचान का भी साधन है। भाषा के बिना मनुष्य सर्वथा अपूर्ण है और अपने इतिहास की परंपरा से विच्छिन्न है। संसार की सभी बातों की भाँति भाषा का भी मनुष्य की आदिम अवस्था के अव्यक्त नाद से अब तक बराबर विकास होता आया है; और इसी विकास के कारण भाषाओं में सदा परिवर्तन होता रहता है। भारतीय आर्यों की वैदिक भाषा से संस्कृत और प्राकृतों का, प्राकृतों से अपभ्रंशों का और अपभ्रंशों से आधुनिक भारतीय भाषाओं का विकास हुआ है।

Scanned with CamScanner

प्राय: भाषा को लिखित रूप में व्यक्त करने के लिए लिपियों की सहायता लेनी पड़ती है। भाषा और लिपि, भाव व्यक्तीकरण के दो अभिन्न पहलू हैं। एक भाषा कई लिपियों में लिखी जा सकती है और दो या अधिक भाषाओं की एक ही लिपि हो सकती है। उदाहरणार्थ पंजाबी, गुरुमुखी तथा शाहमुखी दोनों में लिखी जा सकती है। ~~उदाहरणार्थ पंज~~ उदाहरणार्थ पंजाबी, गुरुमुखी तथा शाहमुखी दोनों में लिखी जाती है जबकि हिन्दी, मराठी, संस्कृत, नेपाली इत्यादि सभी देवनागरी में लिखी जाती है।

भाषा की परिभाषा

भाषा को प्राचीन काल से ही परिभाषित करने की कोशिश की जाती रही है। इसकी कुछ मुख्य परिभाषाएँ निम्न हैं —

भाषा शब्द संस्कृत के भाष् धातु से बना है जिसका अर्थ है - बोलना या कहना अर्थात् भाषा वह है जिसे बोला जाय।

प्लेटो के अनुसार — भाषा और विचार में थोड़ा ही अंतर है। विचार आत्मा की मूक या अध्वन्यात्मक बातचीत है पर वही जब ध्वन्यात्मक होकर होठों पर प्रकट होती है तो उसे भाषा की संज्ञा देते हैं।

स्वीट के अनुसार - भाषा ध्वन्यात्मक शब्दों द्वारा विचारों को प्रकट करना ही भाषा है।

वेंद्रीय के अनुसार - भाषा एक तरह का चिन्ह है। चिन्ह से आशय उन प्रतीकों से है जिनके द्वारा मानव अपना विचार दूसरों पर प्रकट करता है। ये प्रतीक कई प्रकार के होते हैं, जैसे - नेत्रग्राह्य, श्रोत्रग्राह्य और स्पर्शग्राह्य। वस्तुत: भाषा की दृष्टि से श्रोत्रग्राह्य प्रतीक ही सर्वश्रेष्ठ है।

ब्लाक तथा ट्रेगर के अनुसार — भाषा यादृच्छिक भाष्

Scanned with CamScanner

प्रतीकों का तंत्र है जिसके द्वारा एक सामाजिक समूह सहयोग करता है।

स्टुर्टवा : के अनुसार — भाषा यादृच्छिक भाष प्रतीकों का तंत्र है जिसके द्वारा एक सामाजिक समूह के सदस्य सहयोग एवं संपर्क करते हैं।

" भाषा यादृच्छिक वाचिक ध्वनि - संकेतों की वह पद्धति है, जिसके द्वारा मानव परस्पर विचारों का आदान - प्रदान करता है।"

बोली, विभाषा और भाषा

वैसे तो बोली, विभाषा और भाषा का मौलिक अन्तर बता पाना कठिन है, क्योंकि इसमें मुख्यतया अन्तर व्यवहार - क्षेत्र के विस्तार पर निर्भर है। वैयक्तिक विविधता के चलते एक समाज में चलनेवाली एक ही भाषा के कई रूप दिखाई देते हैं। मुख्य रूप से भाषा के इन रूपों को हम इस प्रकार देखते हैं —

बोली — यह भाषा की छोटी इकाई है। इसका सम्बन्ध ग्राम या मण्डल अर्थात सीमित क्षेत्र से होता है। इसमें प्रधानता व्यक्तिगत बोलचाल के माध्यम की रहती है और देशज शब्दों तथा घरेलू शब्दावली का बाहुल्य होता है। यह मुख्य रूप से बोलचाल की भाषा है, इसका रूप (लहजा) कुछ - कुछ दूरी पर बदलते पाया जाता है तथा लिपिबद्ध न होने के कारण इसमें साहित्यिक रचनाओं का अभाव रहता है। व्याकरणिक दृष्टि से भी इसमें विसंगतियाँ पायी जाती है।

विभाषा — विभाषा का क्षेत्र बोली की अपेक्षा विस्तृत होता है यह एक प्रान्त या उपप्रान्त में प्रचलित होती है। एक विभाषा में स्थानीय भेदों के आधार पर कई बोलियाँ प्रचलित

Scanned with CamScanner

रहती हैं। विभाषा में साहित्यिक रचनाएँ मिल सकती हैं।

भाषा — भाषा, अथवा कहें परिनिष्ठित भाषा, विभाषा की विकसित स्थिति है। इसे राष्ट्रभाषा या टकसाली-भाषा भी कहा जाता है।

राज्यभाषा, राष्ट्रभाषा और राजभाषा

किसी प्रदेश की राज्य सरकार के द्वारा उस राज्य के अंतर्गत प्रशासनिक कार्यों को सम्पन्न करने के लिए जिस भाषा का प्रयोग किया जाता है, उसे राज्यभाषा कहते हैं। यह भाषा संपूर्ण प्रदेश के अधिकांश जन-समुदाय द्वारा बोली और समझी जाती है। प्रशासनिक दृष्टि से संपूर्ण राज्य में सर्वत्र इस भाषा को महत्व प्राप्त रहता है।

भारतीय संविधान में राज्यों और केन्द्रशासित प्रदेशों के लिए हिन्दी के अतिरिक्त 21 अन्य भाषाएँ स्वीकार की गई हैं। राज्यों की विधानसभाएं बहुमत के आधार पर किसी एक भाषा को अथवा चाहें तो एक से अधिक भाषाओं को अपने राज्य की राज्यभाषा घोषित कर सकती हैं।

राष्ट्रभाषा संपूर्ण राष्ट्र का प्रतिनिधित्व करती है। प्राय: वह अधिकाधिक लोगों द्वारा बोली और समझी जानेवाली भाषा होती है। प्राय: राष्ट्रभाषा ही किसी देश की राजभाषा होती है।

Scanned with CamScanner

स्नातक स्तर - दो द्वितीय वर्ष (पत्र - 3)

छायावाद
(1918 - 1936 ई०)

'छायावाद' क्या है ?

'छायावाद' आधुनिक काल का महत्वपूर्ण काव्यान्दोलन रहा है। सन् 1918 के पश्चात् हिन्दी कवियों में द्विवेदी काल में उपदेशात्मक साहित्यिक प्रवृत्तियों के प्रति मोह भंग हुआ तथा उनमें उस काल की कविताओं के प्रति विद्रोह का भाव जन्म लेने लगा। ज्यों-ज्यों यह विरोध बढ़ता गया और हिन्दी कविता में द्विवेदी काल की कविता से सर्वथा भिन्न एक नवीन काव्य प्रवृत्ति उत्पन्न हुई। इस विशेष काव्य प्रवृत्ति को 'सूक्ष्म प्रवृत्ति' कहा गया। ऐसी सूक्ष्म प्रवृत्ति से युक्त कविता-धारा का नाम 'छायावाद' रखा गया। और जिस युग में इस प्रकार की कविता लिखी गई उसे 'छायवाद युग' कहा गया।

'छायावाद' शब्द के अर्थ को लेकर आलोचना-जगत में काफी विवाद रहा है। प्रो० (डॉ०) नगेन्द्र शर्मा लिखते हैं "प्रथम (1914-1919 ई०) और द्वितीय (1939-1945 ई०) महायुद्धों के बीच प्रवाहित होनेवाली हिन्दी कविता की सर्वाधिक सचेत और अतिशय कलात्मक धारा, सामान्यतः छायावाद के नाम से जानी जाती है।" वे लिखते हैं "इसका यह नाम, जाने-अनजाने, प्रसन्नता अथवा चिढ़ से, हँसी अथवा व्यंग से ही ग्रहण किया गया, पर चल पड़ा।" जबलपुर (मध्यप्रदेश) से प्रकाशित होनेवाली

Scanned with CamScanner

एक साहित्यिक पत्रिका 'श्रीशारदा' में श्री मुकुटधर पाण्डेय का लेख छपी थी – 'छायावाद क्या है?' इसमें छायावाद को परंपरा से चली आ रही स्वच्छंदतावादी धाराओं में 'मिस्टिसिज्म' (रहस्यवादी भावधारा) से जोड़कर देखा गया फिर 'सरस्वती' (जून 1921) में हिन्दी सुशील कुमार का संवाददाता लेख छपा था, 'हिन्दी में छायावाद', जिसमें 'छायावाद' के नाम पर एक कोरे कागज को दर्शाते हुए यह कहा गया था कि 'छायावाद' 'छायाचित्र', या निर्मल ब्रह्म की विशद छाया है। फिर आगे चलकर आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने 'सरस्वती पत्रिका' (मई – 1927) में सुकवि किंकर नाम से 'आजकल के हिन्दी कवि और कविता' – शीर्षक निबंध में छायावाद को 'अन्योक्ति पद्धति' के रूप में रेखांकित किया है।

डॉ० कामेश्वर लिखते हैं – "छायावाद की 'छाया' न तो शत-प्रतिशत आत्मा की छाया है, और न परमात्मा की, या प्रकृति की, परोक्ष की या रहस्य की, वह तो स्थूल वस्तु पर मन की इन्द्रधनुषी अनुभूतियों की वह अतिशय सूक्ष्म और चंचल छाया है जिसमें कवि की अपनी, एकदम निजी, भावुकता और कल्पनाशीलता का चोखा रंग मिला हुआ है।" वे लिखते हैं कि "इसका क्षेत्र, एक साथ ही इतना व्यापक और गंभीर है कि अध्यात्मवाद, मानवतावाद, रहस्यवाद, दुःखवाद, व्यक्तिवाद इत्यादि सभी इसमें समा जाते हैं। फिर भी द्वैत, अद्वैत, अथवा विशिष्टद्वैतवाद की तरह यह अपने आप में

परम स्वतंत्र और निरपेक्ष कोई दार्शनिक मान्यता नहीं है - यह एक ऐसी सर्वव्यापक है जो जीवन तथा जगत की जड़ता, इतिवृत्तात्मकता तथा स्थूलता के विरुद्ध भाव के स्तर पर व्यक्ति - स्वातंत्र्य एवं आत्मनिष्ठा का उद्घोष करती है।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल 'हिन्दी साहित्य के इतिहास' में लिखते हैं — "छायावाद" शब्द का प्रयोग दो अर्थों में समझना चाहिए। एक तो रहस्यवाद के अर्थ में, जहाँ उसका संबंध काव्य - वस्तु से होता है, अर्थात् जहाँ कवि उस अनंत और अज्ञात प्रियतम को आलंबन बनाकर अत्यंत चित्रमयी भाषा में प्रेम के अनेक प्रकार से व्यंजना करता है। वे आगे लिखते हैं कि "छायावाद' शब्द का दूसरा प्रयोग काव्यशैली या पद्धति विशेष के व्यापक अर्थ में है।"

इस प्रकार वे कहते हैं कि 'छायावाद' का केवल पहला अर्थात् मूल अर्थ लेकर तो हिन्दी काव्यक्षेत्र में चलने वाली श्री महादेवी वर्मा ही हैं। पंत, प्रसाद, निराला इत्यादि और सब कवि पद्धति या चित्रभाषा शैली की दृष्टि से ही छायावाद कहलाए।" जयशंकर प्रसाद के अनुसार "जब वेदना के आधार पर स्वानुभूतिमयी अभिव्यक्ति होने लगी तब हिन्दी में उसे 'छायावाद' के नाम से अभिहित किया गया। ध्वन्यात्मकता, लाक्षणिकता, सौन्दर्यमय प्रतीक विधान तथा उपचार - वक्रता के साथ स्वानुभूति की विवृति छायावाद की विशेषताएँ हैं।"

डॉ० रामकुमार वर्मा के अनुसार "परमात्मा की छाया में, आत्मा की छाया परमात्मा में पड़ने लगती है, तो छायावाद की सृष्टि होती है।"

Scanned with CamScanner

डॉ० नगेन्द्र के अनुसार "छायावाद स्थूल के प्रति सूक्ष्म का विद्रोह है। छायावाद एक विशेष प्रकार की भाव पद्धति है, जीवन के प्रति एक विशेष भावात्मक दृष्टिकोण है।"

महादेवी वर्मा लिखती हैं – "छायावाद तत्वतः प्रकृति के बीच जीवन का उद्गीथ है। ... उसका मूल दर्शन सर्वात्मवाद है।"

डॉ० रामविलास शर्मा जी के अनुसार "छायावाद स्थूल के प्रति सूक्ष्म का विद्रोह नहीं रहा, वरन् पोथी नैतिकता, रूढ़िवाद और सामंती साम्राज्यवादी बन्धनों के प्रति विद्रोह रहा है। यह विद्रोह मध्यवर्ग के तत्वाधान में हुआ था इसलिए उसके साथ मध्यवर्गीय असंगति, पराजय और पलायन की भावना जुड़ी हुई है।"

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी जी के अनुसार "छायावाद के मूल में पाश्चात्य रहस्यवादी भावना अवश्य थी। इस श्रेणी की मूल प्रेरणा अंग्रेजी की रोमांटिक भाव-धारा की कविता से प्राप्त हुई थी और इसमें सन्देह नहीं कि उक्त भाव-धारा की पृष्ठभूमि में ईसाई सन्तों की रहस्यवादी साधना अवश्य थी।"

उपर्युक्त कथनों से स्पष्ट होता है कि "छायावाद रहस्य की भावना से प्रेरित स्वानुभूतिपरक प्रेम, सौन्दर्य और प्रकृति से सम्बद्ध काव्यधारा है जो स्थूलता को नकारते हुए सूक्ष्म भावाभिव्यंजना के लिए शैली एवं शिल्प की नवीनता को स्वीकार करती है।"

Scanned with CamScanner